तृतीय अध्याय

'चित्रलेखा' उपन्यास में चित्रित जीवन-दर्शन : ऐतिहासिक पक्ष

इतिहास का अर्थ, ऐतिहासिकता का अर्थ,

तत्कालीन ऐतिहासिक स्थिति,

बौद्धकालीन परिस्थिति का प्रभाव।

तृतीय अध्याय

चित्रलेखा उपन्यास में चित्रित जीवन दर्शन : ऐतिहासिक पक्ष

'इतिहास' शब्द की व्युत्पत्ति तीन शब्दों 'इति + ह + आस' के संयोग से बनी है। इसी इतिहास का आधार लेकर ऐतिहासिक कथावस्तु का निर्माण किया जाता है। इसमें इतिहासकालीन पात्रों, तथ्यों एवं घटनाओं में से अपने उद्देश्य के अनुकूल कुछ विशिष्ट पात्रों, तथ्यों एवं घटनाओं को चुन लिया जाता है। इसी प्रकार ऐतिहासिक कथा का निर्माण होता है। ऐतिहासिक कथावस्तु की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसकी जड़ कल्पना के आकाश में न होकर वास्तविकता एवं तथ्यों की भूमि में दूर तक गड़ी रहती है और सामान्य कथावस्तु की अपेक्षा अधिक प्रभावोत्पादक होती है।

इतिहास याने व्यापक रूप में पृथ्वी पर रहनेवाले मानव तथा मानवेतर प्राणियों से संबंधित घटित घटना ही है। अतीत की घटनाओं तथा व्यक्तियों से संबंधित होने के कारण ही इतिहास का संबंध प्रायः नाम, घटना और तिथियों से जोड़ा जाता है। प्राचीन इतिहास-लेखकों के सम्मुख, इतिहास प्रधानतः व्यक्तिपरक होता था और सम्राटों, राजनीतिज्ञों, सेनापतियों एवं महत्वपूर्ण तेजस्वी पुरुषों के विविध क्रिया-कलापों का लेखा-जोखा मात्र था। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है। 'जहाँ नाटक जीवन के सहज प्रवाह के बीच से नाटकीय परिस्थितियों का चयन कर तथा प्रमुख प्रभावशाली घटनाओं को रंगमंच पर उतारने के भाव से जीवन की विवेचना करता है, वहाँ उपन्यास पाठक के मन में काल्पनिक रंगमंच का निर्माण कर व्यापक धरातल पर जीवन की सूक्ष्म अभिव्यक्ति करता है।'

'चित्रलेखा' उपन्यास की कथावस्तु अतीत के युग विशेष से संबंध होने के कारण ऐतिहासिक उपन्यास की दृष्टि से भी विचारणीय है। देशकाल और वातावरण को उपन्यासों में बड़ा स्थान है। ऐतिहासिक उपन्यासों का यह तो प्राण है, जिनका मुख्य ध्येय किसी विशिष्ट युग के जीवन के विविध रूपों के साथ-ही-साथ कथावस्तु एवं चरित्रों के नाटकीय स्वत्वों का संयोजन करना होता है। ऐतिहासिक उपन्यास लिखनेवाला लेखक उस काल के वातावरण से बँधा होता है। यदि वह कोई भी ऐसी बात लिख दे जो इस युग-विशेष में संभव न थी तो बात खटक जाएगी और सहृदय पाठक के रसास्वादन में बाधा उपस्थित होगी। ऐतिहासिक उपन्यासों में लेखकों की सबसे बड़ी कुशलता देशकाल तथा ऐतिहासिक वातावरण के सजीव चित्रण में निहित होती है। सच तो यह है कि ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक कथानक तथा पात्र उतने महत्वपूर्ण नहीं होते जितना तत्कालीन युग, उस युग का रहन-सहन, आचार-विचार, रीति-रिवाज, विचारधारा एवं जीवन का आदर्श आदि महत्वपूर्ण रहते हैं। आज की परिस्थिति बिलकुल बदल गई है। आज की इन संघर्षमय परिस्थितियों तथा परिस्थितियों से आबद्ध जीवन में इतनी गतिशीलता, संघर्षमयता एवं जटिलता आ गई है। कोई भी जागरूक पाठक उपन्यास मात्र इसलिए नहीं पढ़ता कि वह मनोरंजन चाहता है, बल्कि इसलिए पढ़ता है कि उससे उसे कोई नवीन जीवन-दृष्टि मिले, ऐसा कोई नया रास्ता मिले जिससे वह अपने जीवन का मार्ग-दर्शन कर सके। सच बात तो यह है कि आज का प्रबुद्ध पाठक उपन्यास को केवल मनोरंजन के साधन-रूप में ही नहीं ग्रहण करना चाहता। वह तो उससे प्रखर और स्पष्ट जीवन-दर्शन की माँग करता है। यही कारण है कि आज के उच्च कोटि के उपन्यासों में केवल मनोरंजकता ही नहीं होती, बल्कि उसमें एक जीवन-दर्शन होता है। आज के उपन्यास का उद्देश्य मात्र मनोरंजन न होकर जीवन की व्याख्या करना या जीवन-दर्शन को प्रस्तुत करना भी है। काव्य के अन्य रूपों की तरह उपन्यास का संबंध भी प्रत्यक्ष रूप से मानव-जीवन से है। वस्तुतः मानव-जीवन ही उपन्यासकार के लिए कथा-सूत्र होता है। उपन्यासकार का मुख्य कार्य तो जीवन-संबंधी यथार्थ घटनाओं एवं कार्यों का निदर्शन तथा

निरूपण करना होता है और इन्हीं के माध्यम से वह अपनी जीवन संबंधी मान्यताओं एवं नैतिक मूल्यों की एक परछाई प्रस्तुत कर देता है। उपन्यासों में जीवन-दर्शन का यही अर्थ है।

'चित्रलेखा' उपन्यास हिंदी जगत की ख्यातिप्राप्त रचना है। 'चित्रलेखा' ऐतिहासिक वातावरण की पृष्ठभूमि पर लिखा गया उपन्यास है। लेखक 'ऐतिहासिक याने इतिहासकालीन पात्र, तथ्यों एवं घटनाओं के महासमुद्र में से अपने उद्‌देश्य के अनुकूल कुछ विशिष्ट पात्रों, तथ्यों एवं घटनाओं को चुन लेता है, और ऐतिहासिक यथार्थ एवं वातावरण की पृष्ठभूमि में अपनी भव्य कल्पना द्‌वारा कतावस्तु का संयोजन करता है।'[2] ऐतिहासिक कथावस्तु की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसकी जड़ कल्पना के आकाश में न होकर वास्तविकता एवं तथ्यों की भूमि में दूर तक गड़ी रहती है और सामान्य कथावस्तु की अपेक्षा अधिक प्रभावोत्पादक होती है। जब किसी सामान्य पाठक को यह ज्ञात हो जाता है कि अमुक कथा या काव्य नाटक की आधारभूमि वास्तविकता एवं तथ्यों में निहित है, घटनाएँ सचमुच की घटी हुई हैं और कथानक के पात्र वस्तुतः किसी युग में रहे थे, उस दशा में कृति तथ्यगत तथा भावगत यथार्थ की अधिक प्रतीति कराकर उसके मन और हृदय पर तीव्रतर आघात करती है और उसकी एक अमिट छाप मन-मस्तिष्क पर पड़ जाती है।

ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक कथानक तथा पात्रों के अलावा भी तत्कालीन युग का रहन-सहन, आचार-विचार, रीति-रिवाज, विचारधारा एवं जीवन का आदर्श महत्वपूर्ण होता है। ऐतिहासिक उपन्यास एक ऐसा उपन्यास है जिसमें अतीत कालीन पात्र, वातावरण एवं घटनाओं के ज्ञात तथ्यों को कल्पना से मांसल और जीवंत बनाने का प्रयास होता है। कोई भी उपन्यास चाहे वह ऐतिहासिक हो अथवा सामाजिक, उसका प्रधान लक्ष्य होता है जीवन की विविध भावनीय संवेदनाओं का विस्तार कर भावनाओं एवं विचारों, हृदय एवं मस्तिष्क के बीच एक नवीन सामंजस्य स्थापित करना तथा सीमित रूप में जीवन के चिरंतन सत्य का उद्‌घाटन करना। इस उद्‌देश्य की पूर्ति के लिए उपन्यास कल्पना का सहारा लेता है। इसी प्रकार कल्पना का सहारा भगवतीचरण वर्माजी ने लेकर ही 'चित्रलेखा' उपन्यास की निर्मिति की है। यह उपन्यास ऐतिहासिक वातावरण में लिखा है मगर उसमें ऐतिहासिक पात्रों के अलावा प्रधान पात्रों के रूप में काल्पनिक पात्र ही ज्यादा है। इसी प्रकार वर्माजी का उपन्यास लिखने के पीछे उद्‌देश्य ही एक समस्या का हल ढूँढना, पाप-पुण्य की छान-बीन करना है। इस उद्‌देश्य पूर्ति के लिए उन्होंने कल्पना का सहारा लिया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस उपन्यास की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है।

'चित्रलेखा' उपन्यास की कथा को देखते हैं तो दिखाई देता है कि कथा एक समस्या को लेकर चली है और वह समस्या है पाप-पुण्य की छान-बीन। यह समस्या दार्शनिक है और ऐसी समस्या को किसी देश और काल के बंधन में बाँधना संभव नहीं है। जिस देश में सुख और समृद्‌धि हो उसी में ही ऐसे प्रश्न मानव-समाज को आकर्षित करते हैं। इसी हेतु से ही वर्माजी ने सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य का ऐतिहासिक काल चुना है। पूरे 'चित्रलेखा' में हमें वैभव, कला और दर्शन का विचित्र संयोग देखने को मिला है। इस उपन्यास का ढाँचा तो ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर खड़ा किया गया है, मगर सैद्‌धांतिक दृष्टि से विचार करते हैं तो यह कहाँ तक उचित है इस पर विचार करना आवश्यक है।

'चित्रलेखा' उपन्यास की कथावस्तु पाटलिपुत्र स्थान पर ही घटित हुई है। 'चित्रलेखा' में सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य तथा महामंत्री चाणक्य का पात्र रूप में उल्लेख हुआ है। उपन्यास में सम्राट और मंत्री चाणक्य के अतिरिक्त अन्य पात्र ऐतिहासिक नहीं है। उपन्यास की कथा ऐतिहासिक नहीं है। जैसे यशपाल के उपन्यास 'दिव्या' और

'अमिता' की कथाएँ भी सर्वथा काल्पनिक हैं किंतु उनका वातावरण ऐतिहासिक युग-विशेष का चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ है। इन उपन्यासों को इनके पुष्ट ऐतिहासिक वातावरण के कारण ऐतिहासिक उपन्यास के रूप में गिना जा सकता है। वस्तुतः ऐतिहासिक उपन्यास आवश्यक रूप से अतीत की एक कल्पित कहानी ही होती है। जिसमें इतिहास का पुट रहता है। अर्थात जिसमें परिचित तिथियों, घटनाओं तथा व्यक्तियों का समावेश होता है। उपन्यास की कथा अगर ऐतिहासिक हो तो लेखक का उत्तरदायित्व और भी बढ़ जाता है। उसके साथ सत्य का सम्मान करना पड़ता है। लेखक अपनी कृति में ऐतिहासिक घटना और पात्रों को स्थान देकर उसमें अपने कल्पना के द्वारा परिवर्तन करता रहता है। वर्माजी चित्रलेखा को ऐतिहासिक मानते हैं, मगर ऐतिहासिक सत्य को सुरक्षित रखने का उत्तरदायित्व अच्छी तरह नहीं निभाया। 'चित्रलेखा' के मुख्य पात्र बीजगुप्त, चित्रलेखा और कुमारगिरि ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं हैं। दूसरे जो सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य और महामंत्री चाणक्य, ऐतिहासिक व्यक्ति होते हुए भी बड़े निर्जीव रूप में प्रस्तुत किए गए हैं।

सम्राट चंद्रगुप्त जिसने प्रथम बार भारत में एक संगठित और सुव्यवस्थित साम्राज्य स्थापित किया। अवश्य ही उसका व्यक्तित्व अभूतपूर्व रहा होगा। लेकिन यही व्यक्ति लेखक के हाथों 'चित्रलेखा' में कठपुतली बनकर रहा है। उसे केवल यहाँ एक रत्नजड़ित सिंहासन पर बिठाकर तर्क-वितर्क के समय एक साधारण सभापति के रूप में प्रस्तुत किया गया है। [3] 'चित्रलेखा' में ऐतिहासिक उपन्यास के रूप में देखने के लिए उसके वातावरण की ऐतिहासिकता के बारे में विचार करने होंगे। 'चित्रलेखा' के वातावरण विषयक जो तथ्य प्राप्त होते हैं, उनका मुख्य स्रोत नायिका चित्रलेखा का नर्तकी जीवन है। उसके आश्रय से तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति स्पष्ट रूप में सामने आती है। पाटलिपुत्र के समाज में विधवाएँ शारीरिक संयम से जीवन व्यतीत करती है। उनका संयम टूटने पर गृह से बहिष्कार हो जाता है। लेकिन समाज विधवाओं के पुनर्विवाह की अनुमति नहीं देता। और ऐसी नारी (पतिता) नर्तकी या वेश्या का व्यवसाय अपना लेती है, यह विधिवत है। इन स्त्रियों को नर्तकी-वर्ग में विधिवत शिक्षा दी जाती है। इसी नर्तकी के सौंदर्य में पुरुष या समाज अपना हृदय दे सकता है। नर्तकी से मनोरंजन भी कर सकता है। नर्तकी अनेक उत्सवों में उच्च कुलों में जाकर अपनी कला का प्रदर्शन करती है। परंतु इसी कुलीन नारी-समाज में उसे कोई आदर का स्थान नहीं मिलता। यों कोई पुरुष ऐसी पतिता नर्तकी से विवाह भी नहीं कर सकता। अगर नर्तकी से उत्पन्न संतान हो उसको वैधानिक संतान नहीं माना जाता और उसे उसकी संपत्ति का उत्तराधिकारी नहीं माना जाता। [4]

उपन्यासों में देश-काल का यह चित्रण ही उनका प्राण होता है, और उनकी सफलता बहुत कुछ देश-काल के जीवंत एवं वास्तविक चित्रण पर ही निर्भर होती है। 'चित्रलेखा' की कथा चंद्रगुप्त मौर्य के शासनकाल की है। इस काल में पाटलिपुत्र ऐश्वर्यसंपन्न नगरी है। यहाँ के क्षत्रियों का जीवन उल्लास-विलास में बीतता है, और यहाँ रहनेवाले ब्राह्मणों का धर्म त्याग और विराग है और ये ब्राह्मण लोग जनरव से दूर एकांत में ध्यानरत रहते हैं। समाज में इसी समय गुरु-शिष्य परंपरा, ज्ञान-प्रसार को बड़ा ही महत्व था। ये गुरुशिष्यों को सिर्फ उपदेश ही नहीं देते, बल्कि उन्हें जीवन का साक्षात अनुभव कराके पूर्ण बनाते थे। जब यज्ञ होते थे, उसमें बलिदान होता है और यह बलिदान बौद्ध भिक्षुकों को अच्छा नहीं लगता था और वह इस पद्धति का विरोध करते थे। समाज में सामंतगणों को प्रतिष्ठित माना जाता है, और उनकी नियुक्ति राजाज्ञा द्वारा होती है। समाज में संपत्ति के अनुसार वर्ग-भेद किया जाता है। उस समय पुत्र न होने पर पुत्री का अधिकार नहीं होता। इस प्रकार मौर्य काल में समाज रचना थी। जब हम इस दृष्टि से चित्रलेखा के देशकाल, वातावरण की योजना पर विचार करते हैं, तो स्पष्ट है कि यद्यपि उपन्यासकार इस दिशा में पूर्ण सफल नहीं कहा जा सकता, तथापि उसने ऐसे पर्याप्त

निर्देश किए हैं, जिससे बौद्धकालीन सामाजिक दशा पर प्रभाव पड़ता है। यह सामाजिक दशा समाज के उच्च वर्ग के जीवन से ही संबंधित है।

'चित्रलेखा' उपन्यास में विशालदेव और श्वेतांक को, जिनकी आयु पच्चीस वर्ष के लगभग है, महाप्रभु रत्नाबर से शिक्षा प्राप्त करते दिखाना, तथा पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर प्रत्यक्ष अनुभव को शिक्षा का माध्यम प्रदर्शित करना, भारत के प्राचीन गुरुकुलों की परंपरा का पता चलता है। सामंत बीजगुप्त भी रत्नांबर का शिष्य रह चुका है और स्वगुरु के साथ हिमालय प्रदेश की यात्रा भी करता है। रत्नांबर उससे गुरुदक्षिणा न लेने का उल्लेख करते हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि छात्रों से फीस नहीं ली जाती थी, अपितु गुरुदक्षिणा के रूप में शिक्षा-समाप्ति पर कुछ माँग लिया जाता था। एक ही गुरु से शिक्षा प्राप्त करनेवाले छात्र गुरुभाई कहलाते थे, जैसा कि रत्नंबर के इस कथन से स्पष्ट होता है - 'बीजगुप्त। तुमसे सब बातें स्पष्ट रूप से कहूँगा। आज मेरे इस शिष्य ने मुझसे प्रश्न किया है कि पाप क्या है? मैं इसका उत्तर देने में असमर्थ हूँ, तुम मेरी सहायता कर सकते हो। तुम मेरे शिष्य रहे हो, मैंने कभी तुमसे कोई गुरु दक्षिणा नहीं ली। पाप का पता लगाने के लिए ब्रह्मचारी की कुटी उपयुक्त स्थान नहीं है, संसार के भोग-विलास में ही पाप का पता लग सकेगा। तुम्हारा भवन और तुम्हारा समाज - इन चीजों से श्वेतांक को भिज्ञ कराना आवश्यक है, इसलिए मैं इसको तुम्हारे सामने सेवक के रूप में उपस्थित कर रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि इसे तुम सेवक रूप से स्वीकार करो, पर एक बात और याद रखना .... श्वेतांक तुम्हारा गुरुभाई भी हो सकता है।' [5] यद्‌पि शिक्षा देनेवाले गुरुजनों के लिए यह आवश्यक नहीं था कि वे विवाह न करें, तथापि उनमें से कुछ आजन्म ब्रह्मचारी भी रहते थे, जैसे कि हमें महाप्रभु रत्नांबर और योगी कुमारगिरि दृष्टिगत होते हैं। उस काल में सामंतों का जीवन बड़ा विलासमय और भोगप्रधान था। बीजगुप्त के विलास-वर्णन से इस तथ्य पर सम्यक् प्रकाश पड़ता है - 'बीजगुप्त भोगी है, उसके हृदय में यौवन की उमंग है और आँखों में मादकता की लाली। उसकी विशाल अट्टालिकाओं में भोग-विलास नाचा करते हैं रत्न जटित मदिरा के पात्रों में ही उनके जीवन का सारा सुख है। वैभव और उल्लास की तरंगों में वह केलि करता है। ऐश्वर्य की उसके पास कमी नहीं है। उनमें सौंदर्य है और उसके हृदय में संसार की समस्त वासनाओं का निवास है। उसके द्‌वार पर मातंग झूमा करते हैं। ईश्वर पर उसे विश्वास नहीं, शायद उसने कभी ईश्वर के विषय में सोचा तक नहीं है और स्वर्ग तथा नरक की उसे कोई चिंता नहीं। आमोद और प्रमोद ही उसके जीवन का साधन है तथा लक्ष्य है।' इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल याने चंद्रगुप्त के शासनकाल में पाटलिपुत्र में सामंत लोग इस प्रकार भोग विलासी थे। हमें उनके जीवन का पता चलता है।

उपन्यासकार, कलाकार होने के अतिरिक्त सामाजिक प्राणी भी होता है और इन अर्थों में समाज के प्रति उनका दायित्व सामान्य लोगों की अपेक्षा कुछ अधिक होता है। वह समाज एवं जीवन का निरीक्षण सिर्फ दूर से खड़े होकर ही नहीं करता, बल्कि उसपर गंभीरता से मनन भी करता है। फलस्वरूप जीवन के प्रति उसकी एक अपनी दृष्टि बन जाती है। जीवन के बारे में वर्माजी की भी अपनी एक दृष्टि है। अनुभव के बारे में जानने के लिए जैसे जीवन में पाप और पुण्य क्या है? वे अपने दोनों शिष्यों को अनुभव लेने की आज्ञा देते हैं। इसी समस्याप्रधान प्रश्न से ही उपन्यास की शुरुआत होती है। वह प्रश्न श्वेतांक अपने गुरु रत्नांबर से करता है, 'और पाप।' [6] जिज्ञासु शिष्यों के प्रश्न की विषमता से प्रेरित होकर महाप्रभु रत्नांबर उन्हें दर्शन की व्याख्या द्‌वारा इस प्रश्न को नहीं समझाना चाहते। इसी कारण वे उन्हें दो विभिन्न परिस्थितियों में डालकर अनुभव द्‌वारा उन्हीं से इसकी व्याख्या कराना चाहते हैं। उनका तर्क है कि महत्व के विचार से अनुभव ही कीमती है - कोरा ज्ञान नहीं। दृश्य में महाप्रभु रत्नांबर से शिक्षा प्राप्त करते दिखाना, तथा पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर प्रत्यक्ष अनुभव को

शिक्षा का माध्यम प्रदर्शित करना, भारत के प्राचीन गुरुकुलों की परंपरा का द्योतक है।[7] सामंत बीजगुप्त भी महाप्रभु रत्नांबर का शिष्य रह चुका है।

'चित्रलेखा' उपन्यास में पाप और पुण्य के बारे में जानने के लिए स्वयं अनुभव लेने के लिए रत्नांबर अपने दोनों शिष्यों को संसार में भेज देते हैं। उनके शिष्यों के सामने जो समस्या या प्रश्न खड़ा हो गया है उसका उत्तर ढूंढने के लिए और पाप-पुण्य को अनुभव से समझने के लिए रत्नांबर अपने शिष्यों को भेजते हैं। जैसे श्वेतांक क्षत्रिय है इसीलिए उसे भोगी बीजगुप्त के पास भेज देते हैं और विशालदेव ब्राह्मण पुत्र होने के कारण उसे योगी कुरमागिरि के पास भेज देते हैं। बीजगुप्त भोग-विलास और प्रेम में महत्व रखता है और कुमारगिरि योग-सिद्धि में अविरत मग्न रहता है। प्राचीन काल के समाज में इसी प्रकार सामंत लोगों का जीवन संपत्ति के कारण भोगी-विलासी होता था। मगर योगी यह अल्प समय में ही कम आयु में ही योग मार्ग में लग जाते हैं। तपस्या करते हैं सिद्धि प्राप्त करने में लग जाते हैं। इसी प्रकार की स्थिति कुमारगिरि की है वह भी कम आयु में ही योगी बन गया है। 'चित्रलेखा' के रचना काल में योगियों के चमत्कारों का भी बोलबाला था। बहुत से युवक वर्णाश्रम धर्म की अवहेलना करते समय ही योगी हो जाते थे, और साधना द्वारा आश्चर्यजनक शक्तियाँ प्राप्त कर लेते थे। 'चित्रलेखा' के मुख्य पात्रों में से योगी कुमारगिरि यह पात्र इसी प्रकार का उदाहरण है।[8] योगी कुमारगिरि ने अल्प आयु में ही सिद्धि प्राप्त की है और उसमें चमत्कार कर दिखाने की शक्ति भी आ गई है। इसीलिए उसे इंद्रियजीत और सामर्थ्यवान भी कहा जाता है।

पाटलिपुत्र का सामंत बीजगुप्त नगर की सर्व-सुंदरी नर्तकी चित्रलेखा से प्रेम करता है और उसके साथ पत्नी जैसा संबंध रखता है। अपने इस अवैध संबंध पर लज्जित न होकर गर्व ही करता है। उस समय के भोग-विलासप्रिय समाज में उसे इस तथ्य को छिपाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, बल्कि वह बिना किसी संकोच के चित्रलेखा के साथ राज-मार्गों और भोजों में आता-जाता है। पाटलिपुत्र के अन्य सामंत भी इस हेतु व्यग्र दिखाए गए हैं। वे किसी भी प्रकार चित्रलेखा का हृदय जीतना चाहते हैं। चंद्रगुप्त मौर्य के शासन काल में देश में चारों ओर सुख और समृद्धि का राज्य था। उस जमाने में बौद्ध धर्म का प्रचार बड़े वेग से हो रहा था। विलास और वैभव से जर्जर समाज में क्रांति हो रही थी। बुद्ध जी ने शांति प्राप्ति के लिए निस्पृह जीवन पर जोर दिया था। कुरमारगिरि में बौद्ध दर्शन का अधिक प्रभाव जान पड़ता है। समाज में निवृत्तिवाद की बढ़ती और संसार की वास्तविकताओं से मुँह मोड़ लेने की प्रवृत्ति बड़े जोरों से बढ़ रही थी। संन्यासियों और योगियों का यथेष्ट आदर था जैसा कि कुमारगिरि के जीवन से पता लगता है।

इतिहास में पाटलिपुत्र के प्रबंध की बड़ी प्रशंसा की गई दिखाई देती है। वहाँ के राजप्रासादों, भवनों, राजमार्गों तथा उद्यानों की रमणीयता का साधारण वर्णन आवश्यक था। मगर इस उपन्यास में उतना वर्णन देखने को नहीं मिलता। उपन्यास में पाटलिपुत्र के राजमार्गों का थोडा बहुत वर्णन आया है - राजमार्ग पर जाती चित्रलेखा पर पुष्पहारों की वर्षा करने में उन्हें लज्जानुभव नहीं होता था।

'चित्रलेखा' में ऐतिहासिकता का वर्णन कम दिखाई देता है। इसमें ऐतिहासिक पात्र दो ही आए हैं जो सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य का शासन काल के साक्षी हैं। वे हैं सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य और महामंत्री चाणक्य जो इतिहासकालीन पात्र है। लेकिन यह ऐतिहासिक होकर भी, सम्राट होकर भी उनका उपन्यास में समावेश दो ही प्रसंगों में आया है। उपन्यास के प्रमुख पात्र के रूप में बीजगुप्त, चित्रलेखा और कुमारगिरि ही है। मगर वे ऐतिहासिक पात्र नहीं है। इससे यह स्पष्ट होता है कि इस उपन्यास का काल चंद्रगुप्त मौर्य का शासनकाल ही है। मगर उसकी बीज की कथा और पात्र काल्पनिक बनाए गए हैं। जैसे सारी कथा चित्रलेखा, बीजगुप्त और

कुमारगिरि पर ही आधारित है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कथा के बीच में ही पाटलिपुत्र के सामंत बीजगुप्त और नगर की सर्वसुंदरी नर्तकी चित्रलेखा की प्रणय कथा है। लेकिन ये कथाएँ पूर्णतः काल्पनिक हैं। अगर उपन्यास का वातावरण और पृष्ठभूमि देखते हैं तो दोनों इतिहासकालीन लगते हैं। जैसे प्राचीन राजा मौर्य कालीन है, राजमार्ग, सामंत लोग, गुरुकुल पद्धति, बौद्ध काल इन सभी का वर्णन आया है, इससे यह स्पष्ट होता है कि इस उपन्यास का वातावरण पूरी तरह से ऐतिहासिक है।

कथा के शुरू में प्राचीन कालीन गुरुकुल पद्धति का पता चलता है, बौद्ध धर्म का प्रभाव किस प्रकार था, उसी प्रकार पाटलिपुत्र के राजप्रासाद, राजमार्ग आदि का वर्णन आया है। पाटलिपुत्र के समाज का वर्णन आया है, उसके बाद कथा के इस ऐतिहासिक वर्णन के बाद पाटलिपुत्र का सामंत बीजगुप्त और नर्तकी चित्रलेखा इन दोनों में जीवन और सुख के बारे में चर्चा चलती है इसका वर्णन है। बीजगुप्त भोग-विलास में रस मानता है। वह चित्रलेखा को आलिंगन-पाश में लेकर कहता है - 'तुम मेरी मादकता हो' [9] चित्रलेखा नर्तकी थी मगर वह वेश्या नहीं थी। इसके कारण थे और इन कारणों का संबंध गतजीवन से था। वह एक विधवा ब्राह्मण स्त्री थी। वह अठारह वर्ष में ही विधवा हो गई। वह संयम से ज्यादा दिन तक नहीं रह सकी और एक दिन उसके जीवन में कृष्णादित्य आ गया। उसने चित्रलेखा की तपस्या भंग कर दी। उसे उस समय एक नर्तकी ने आश्रय दे दिया। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में विधवा स्त्री को कितना संयम रखना पड़ता था और पदच्युत होने से उसे समाज से बाहर निकाला जाता था। उसके बाद एक ऐसे ही नृत्य करते समय सामने बीजगुप्त के दर्शन हुए। तभी लोगों के मुख से निकल पड़ा - 'अरे यह तो बीजगुप्त है।' [10]

बीजगुप्त ने प्रथम बार चित्रलेखा को देखने के बाद उससे फिर मिलने की इच्छा व्यक्त की, तब चित्रलेखा अपने विचार स्पष्ट करती है - 'मैं व्यक्ति से नहीं मिलती। मैं केवल समुदाय के सामने आती हूँ। व्यक्ति का मेरे जीवन से कोई संबंध नहीं।' [11] चित्रलेखा के तर्कपूर्ण बातों पर बीजगुप्त अपना तीर की भाँति विचार बताता है - 'व्यक्तित्व जीवन में प्रधान है और व्यक्ति से ही समुदाय बनता है। व्यक्ति वर्जित है, तो उस व्यक्ति को समुदाय का भाग बनना अपना ही अपमान करना है।' [12]

चित्रलेखा बीजगुप्त के ऐसे तीर के जैसे विचारों के कारण उसकी ओर आकर्षित होती है। दासी के हाथों बीजगुप्त के लिए संदेश भेजती है। उसके बाद दोनों एक साथ रहने लगे। एक दिन रात के समय बीजगुप्त के यहाँ रत्नांबर आते हैं। जब वे बीजगुप्त के यहाँ चित्रलेखा को देखते है तब उन्हें आश्चर्य होता है - 'नगर की सर्वसुंदरी तथा, पवित्र नर्तकी अर्धरात्रि के समय बीजगुप्त के केलिगृह में। आश्चर्य होता है।' [13] इससे प्राचीन काल में बौद्धकालीन वातावरण की योजना का पता चलता है। जिसमें नगर की सर्वाधिक सुंदरी और कला विलक्षण युवती को 'नगर-वधू' या जनपद-कल्याणी की उपाधि से विभूषित किया जाता था। इस रूप में उस काल की युवतियाँ किसी एक व्यक्ति की भोग्या न होकर समग्र समाज की ही कला-दृष्टि का साधन होती थी।

वैसे तो उपन्यासकार का उद्देश्य यहाँ बौद्ध-कालीन वातावरण को सजीव रूप में प्रस्तुत करने का नहीं है। अगर लेखक चाहता तो उस काल की वेशभूषा, खान-पान, आचार-विचार आदि तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए प्राचीन काल के वातावरण को भी अधिक सजीव और विश्वसनीय बना सकता था। श्वेतांक अपने गुरु के आज्ञानुरूप बीजगुप्त के यहाँ रहने लगता है। वह श्वेतांक को चित्रलेखा से परिचित करता है - 'अच्छा तो सुनो। इनका नाम चित्रलेखा है, और यह पाटलिपुत्र की सर्व सुंदरी नर्तकी होते हुए भी मेरी पत्नी के बराबर है, इसीलिए यह तुम्हारी स्वामिनी भी हुई।' [14]

रत्नांबर अपने दूसरे शिष्य विशालदेव को योगी कुमारगिरि के पास लेकर गए तब वे विशालदेव से स्पष्ट रूप से कहते हैं - 'जानना चाहते हो कि पाप क्या है? पर पाप क्या है यह अधिकतर अनुभव से ही जाना जा सकता है और मेरे साथ रहकर तुम्हें पाप का अनुभव न हो सकेगा। मेरा क्षेत्र है संयम और नियम - और संयम और नियम से पाप दूर रहता है। फिर भी आचार्य का अनुरोध है कि मैं तुम्हें अपना शिष्य बनाऊँ। शिष्य बनाने के पहले तुम और आचार्य पर यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि मैं तुम्हें पुण्य का रूप दिखला दूँगा, और पुण्य को जानकर तुम पाप का पता लगा सकोगे।'[15] इस कथन से पुराने जमाने के योगी, साधु लोग किस प्रकार संसार के पाप-पुण्य, सुख-दुःख से दूर थे इसका पता चलता है। चित्रलेखा सुंदर नर्तकी है उसके सानिध्य में जो आता है वह उसकी ओर आकर्षित होता है। श्वेतांक भी बीजगुप्त का सेवक होकर भी चित्रलेखा की ओर आकर्षित होता है। उसकी हाथों से इच्छा न होकर भी मदिरा पीता है।

विशालदेव को कुमारगिरि में महान आत्मा के दर्शन होते हैं और वह स्वयं को धन्य समझता है। और कुमारगिरि के सामने नतमस्तक होता है। दोनों को योग्य गुरु और योग्य शिष्य की प्राप्ति होती है।

एक दिन सूर्यास्त की वेला में पथ भूलकर बीजगुप्त नर्तकी चित्रलेखा के साथ कुमारगिरि की कुटिया में रात्रिभर के लिए आश्रय की इच्छा से जाता है। कुमारगिरि स्त्री को देखकर उनके मन में संकोच निर्माण होता है। इस व्यवहार पर बीजगुप्त कुमारगिरि से कहते हैं - 'भगवान, मुझे यह तो ज्ञात है कि यह एक योगी की कुटी है, पर यह नहीं सोचा था कि एक इंद्रियजीत योगी को केवल रात्रिभर के लिए स्त्री को, और उस स्त्री को जो एक पुरुष के साथ है आश्रय देने में संकोच होगा।'[16]

उसी समय चित्रलेखा इन दोनों के कथन सुनाती है और वह अपने तर्कों से योगी को अभिभूत करती है। दोनों एक दूसरे से प्रभावित हुए थे योगी ने नर्तकी के सौंदर्य के साथ-साथ ज्ञान देखा और नर्तकी ने योगी में सौंदर्य। जाते-जाते चित्रलेखा योगी को तार्किक संदेश देती है - 'योगी! तपस्या जीवन की भूल है, यह मैं तुम्हें बतलाए देती हूँ। तपस्या की वास्तविकता है आत्मा का हनन। अच्छा, श्रीचरणों को नर्तकी चित्रलेखा का प्रणाम।'[17]

चित्रलेखा के रचनाकाल में योगियों के चमत्कारों का बोलबाला था। कम आयु में ही योगी बनकर तपस्या से सिद्धि प्राप्त करते हैं और अपने आत्मविश्वास के बल पर चमत्कार करते हैं। साधना द्वारा आश्चर्यजनक शक्तियाँ प्राप्त कर लेते थे। योगी कुमारगिरि इसी प्रकार का योगी था। उसमें भी अनेक प्रकार के चमत्कार करने की शक्ति है। समाज में आस्तिक और नास्तिक दोनों ही प्रकार की विचारधारा के लोग थे। महाराज चंद्रगुप्त के महामंत्री चाणक्य धार्मिक रूढ़ियों के विरोधी थे। नीतिशास्त्र को धर्म का विरोध करना भी कल्याणकर हो सकता है। उनकी यह धारणा सभी लोगों को ग्राह्य नहीं थी कि सत्य और ईश्वर का साक्षात्कार नहीं किया जा सकता, तथा योगी कुमारगिरि जैसे कुछ योगी अपनी आत्मशक्ति द्वारा लोगों को ईश्वर और सत्य के दर्शन करा देने का विश्वास दिया करते थे। योगी कुमारगिरि द्वारा महाराज चंद्रगुप्त के सभासदों को यौगिक चमत्कार दिखाना इसका प्रमाण है। लोगों ने देखा कि योगी कुमारगिरि जहाँ खड़े थे, उसी के पास यज्ञ-वेदों से एक अग्नि-शिखा निकली और वह छत की ओर बढ़ने लगी उस अग्नि का प्रकाश ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्न-कालीन सूर्य के प्रकाश से कहीं अधिक तीव्र था। छत पर पहुँचकर वह उसको भेद गई और आकाश की ओर बढ़ी। धीरे-धीरे वह पतली-सी अग्नि-शिखा आकाश में बढ़ने लगी और उसका प्रकाश इतना तीव्र हो गया कि लोगों के नेत्र उस प्रकाश को न सहन कर सकने के कारण बंद होने लगे, पर आश्चर्य की बात यह थी कि उस अग्नि-शिखा में ताप न था, केवल प्रकाश था। यह दृश्य सारे लोग शांत बैठकर देखते रहे।

कुमारगिरि इस अग्नि-शिखा को सत्य बताते हैं तथा ईश्वर के दर्शन कराते हुए ऐसा दृश्य उपस्थित कर देते हैं - 'इस बार वह अग्नि-शिखा धुँधली होने लगी और अग्निपुंज में परिणत हो गई। इस अग्नि-पुंज में लोगों ने विशाल नगर बनते और नष्ट होते देखे। उन्होंने उसमें पृथ्वी, जल, वायु तथा आकाश देखा। धीरे-धीरे वह सब लोप हो गया और वही अग्नि-पुंज रह गया।' [18] 'चित्रलेखा' उपन्यास में अन्य भी ऐसा ही चमत्कार दिखाया गया है, जब रुधिर स्वच्छजल में तथा नारकीय जीव-जंतु कमल-पुष्पों में परिणत हो जाते हैं। इनसे इस तथ्य पर प्रकाश पड़ता है कि बौद्धकाल में योगियों में चमत्कारों का बोलबाला था। [19]

उपर्युक्त दृश्य का सारा वर्णन चंद्रगुप्त मौर्य के राजदरबार का ऐतिहासिक है। उसी प्रकार उपन्यास में ऐतिहासिक वर्णन इस प्रसंग में दिखाई देता है। महाराज चंद्रगुप्त की सभा में होनेवाले तार्किक विवाद से इस तथ्य पर प्रकाश पड़ता है कि बड़े यज्ञों में अक्सर विद्वानों में तार्किक विवाद हुआ करते थे तथा नृत्य-संगीत की भी आयोजना की जाती थी।

योगी कुमारगिरि ने अपनी आत्मशक्ति के आधारपर ईश्वर और सत्य को चमत्कार करके सभी दरबारियों को दिखाया। लेकिन सम्राट का महामंत्री चाणक्य को इसमें प्रसन्नता नहीं मिली। जो कूटनीतिज्ञ है, उसे इस चमत्कार में सत्यता नहीं दिखाई दी और उसने किसी भी प्रकार के ईश्वर के दर्शन भी नहीं किए। राजसभा के सभी जन ने ईश्वर और सत्य को देखा इतनाही नहीं तो सम्राट भी इससे सहमत हो गए। इस प्रकार योगी ने आभास मात्र निर्माण करके सभी को ईश्वर की प्रकाश-किरण दिखाकर मोहित एवं प्रभावित कर दिया। परंतु उस समय चाणक्य की नजर उस प्रकाश-किरण को न देख सकी थी, फिर भी इस दृश्य को देख सम्राट भी प्रभावित होने के कारण चाणक्य को उनपर विश्वास करना पड़ा और उस समय उन्होंने सहर्ष अपनी पराजय स्वीकार कर ली। यह सभी आभास मात्र है यह समझकर भी चाणक्य महाराज के कारण कुछ कह नहीं सके और अपनी हार स्वीकार करके चुपचाप बैठ गए।

उसी सभा में नर्तकी चित्रलेखा बैठी सब कुछ देख रही थी। वह भी इस प्रकाश-किरण को न देख सकी थी। उसे यह सब मिथ्या लग रहा था। इसलिए उसने सभी के आँखों पर से मिथ्या आवरण जो पड़ा था वह हटाने का काम किया और उस समय अपनी तर्कपूर्ण बातों से सभी की आँखें खोलीं। उसने कुमारगिरि से प्रश्न पूछे - 'योगी। ठहरो। मेरें भ्रम का निवारण अभी नहीं हुआ।' [20] लोगों की आँखें चित्रलेखा की ओर घूम पड़ीं। जन-समुदाय का कौतुहल बढ़ गया। योगी कुमारगिरि को रुक जाना पड़ा। आगे बढ़कर चित्रलेखा ने कहा - 'योगी, तुमने जो कुछ दिखलाया था, वह मैंने नहीं देखा। मंत्री चाणक्य को जब लोग झूठा ठहरा सकते हैं; पर मैं नहीं। मैं तुमसे सत्य तथा ईश्वर की दुहाई देकर पूछती हूँ कि क्या वास्तव में तुमने भी सत्य और ईश्वर के उस स्वरूप को देखा है, जिसको तुमने सारी सभा को दिखलाया है?' [21]

नर्तकी की आँखें योगी की आँखों से मिल गईं। योगी की आँखों में विश्वास का तेज था और तपस्या का बल; और नर्तकी की आँखों में उल्लास की चमक और अविश्वास की आभा थी। कुमारगिरि के मुख से अचानक ही निकल पड़ा - 'नहीं।'

लोग चौंक उठे। मंत्री चाणक्य को भी आश्चर्य हुआ और वह उठ खड़े हुए। परंतु चित्रलेखा योगी से तार्किक प्रश्न पूछती ही रही और सत्य क्या है, यह सब लोगों के सामने लाने का काम करती ही रही। - 'योगी। क्या यह ठीक है कि तुमने अपनी आत्मशक्ति से सारे जन-मंडल को प्रभावित करके अपनी कल्पना द्वारा निर्मित सत्य तथा ईश्वर का रूप दिखलाया है? झूठ मत बोलना, मैं सत्य तथा ईश्वर की दुहाई देकर तुमसे यह

प्रश्न पूछ रही हूँ - और यह भी याद रखना; तुम योगी हो।' [22] इस प्रश्न पर योगी विचार करता है और फिर उत्तर देता है - 'ठीक कहती हो।'

यह प्रश्नोत्तर सुनकर लोग स्तब्ध रह गए। चित्रलेखा ने फिर पूछा - 'एक प्रश्न और है। क्या यह भी ठीक है कि जिन लोगों की आत्मशक्ति इतनी प्रबल है कि वे तुम्हारी आत्मशक्ति से प्रभावित नहीं हो सके, उन लोगों को तुम अपनी कल्पनाजनित चीजों को नहीं दिखला सके।' यह प्रश्न सुनकर सभा में विचित्र हलचल मच गई। योगी कुमारगिरि को अपनी स्थिति का आभास हो गया। कुछ देर सोचकर उन्होंने शांत भाव से उत्तर दिया। - 'जो ईश्वर पर विश्वास करता है, उसी में आत्मशक्ति है; नास्तिक में आत्मशक्ति नहीं होती।' [23]

इस प्रकार योगी को चित्रलेखा के तार्किक प्रश्नों पर सत्य विवश मन से स्वीकार करना पड़ा। और वह स्वयं पराजित हो गया। विजय का मुकुट सम्राट की सहमति से चाणक्य ने चित्रलेखा के मस्तक पर रख दिया। योगी के इस अनुचित आचरण का उचित दंड देने का सम्राट ने अपना मंतव्य प्रकट किया। इसके बाद यह देखकर कि चित्रलेखा एक नर्तकी है उसने अपना अपमान किया है, योगी के नेत्र क्रोध से लाल हो गए। भला उन्हें दंड देने का साहस किसमें था। परंतु यह साहस एक साधारण नर्तकी ने कर दिखाया। चित्रलेखा ने इतना ही नहीं किया तो दंडस्वरूप अपना विजय-मुकुट योगी कुमारगिरि के मस्तक पर रख दिया। यह सब होने के बाद नृत्य पुनः आरंभ हो गया। कुमारगिरि इस दंड और पराजय पर विचार करते हुए तेजी से बाहर चले गए। अपमानित और पराजित योगी को एक नया अनुभव हुआ। इस प्रकार एक स्त्री के कारण ज्ञान के क्षेत्र में पराजित हुए थे और इसी बात का योगी को बहुत दुख था। योगी यही कहते हुए सभा से बाहर चले गए कि - 'दंड और पराजय पर विचार करना होगा'

योगी कुमारगिरि द्वारा चंद्रगुप्त के दरबार में यौगिक चमत्कार दिखाया जाना, राजदरबार में विद्वानों में वादविवाद होना, जैसे महामंत्री चाणक्य, सम्राट चंद्रगुप्त, योगी कुमारगिरि और नर्तकी चित्रलेखा इनके आपस में सत्य और ईश्वर को लेकर जो बातचित होती है वह इसी प्रकार के वादविवाद का यथार्थ उदाहरण है। विजयी विद्वान को मुकुट पहनाना आदि वर्णन 'चित्रलेखा' का इतिहास से और प्राचीनता से संबंध जोड़ते हैं यह दिखाई देता है।

चंद्रगुप्त की राजसभा से खिन्न होकर कुमारगिरि अचानक चले गए थे। उन्हें अपनी पराजय पर बहुत खेद होने लगा। उन्हें लग रहा था कि मैंने रुख इसलिए अपनाया था कि मेरी पराजय हो। इस प्रकार योगी की स्थिति हो गई। मगर चित्रलेखा की स्थिति अलग ही हो गई थी। वह स्वभाव वर्तन से चंचल, परिवर्तनशील होने के कारण योगी से आकर्षित होती है। और उससे दीक्षा लेना चाहती है। योगी के मन में भी चित्रलेखा के असीम सौंदर्य के कारण कंपन उत्पन्न हुआ। इससे यह स्पष्ट होता है कि दोनों भी एक दूसरे से आकर्षित हो गए हैं। बीजगुप्त दूरदर्शी होने के कारण उसे भी इस बात की जानकारी होती है। वह श्वेतांक से कहता है - 'जिसे तुम चित्रलेखा की विजय समझते हो वह उसकी बहुत बड़ी पराजय है। चित्रलेखा और कुमारगिरि कोई भी विजयी नहीं है। दोनों ही पराजित हुए हैं। परिस्थिति का चक्र तेजी के साथ घूम रहा है। उसी चक्र के फेरे में ये दोनों प्राणी फँस गए हैं।' [24] श्वेतांक को बीजगुप्त की ये बातें यथार्थ लगती है जब चित्रलेखा उसे यह बताती है - 'सुनो। मेरी आज की विजय वास्तव में मेरी विजय न थी वरन मेरी पराजय थी। कुमारगिरि ने मेरे जीवन को बुरी तरह प्रभावित कर दिया है।' [25] इस प्रसंग से नर्तकी चित्रलेखा का प्रेम परिवर्तनशील है इसका पता चलता है।

'चित्रलेखा' उपन्यास में सम्राट के राजदरबार का वर्णन उसमें कुमारगिरि का चमत्कार यह दृश्य इतिहास कालीन लगता है। उसके बाद के दृश्य जो चित्रलेखा, बीजगुप्त और कुमारगिरि को लेकर चित्रित किए गए हैं

वे प्रणय से भरे हुए हैं। किस प्रकार चित्रलेखा बीजगुप्त से प्रेम करते-करते कुमारगिरि की ओर आकर्षित होकर उससे प्रेम करने लगती है, इसका वर्णन वर्माजी ने उपन्यास के बीच में किया है। इसी वर्णन की दरम्यान की कथा में ऐतिहासिक वर्णन नहीं दिखाई देता। इसी प्रकार के प्रणय भरे दृश्य देखने से यह पता चलता है कि चित्रलेखा एक चंचल नारी है उसका प्रेम कितना परिवर्तनशील है। वह पहले बीजगुप्त से प्रेम करती है उसे अपना पति भी मानती है। मगर कुमारगिरि के दर्शन होने के बाद उसी की तरफ आकर्षित होती है और उसके साथ प्रेम करने लगती है। वह दीक्षा लेने के माध्यम से उसके पास जाना चाहती है और कुमारगिरि का जीवन अस्वस्थ कर देती है। इससे स्पष्ट होता है कि वर्माजी ने जहाँ ऐतिहासिक सत्य को बाजू में रखकर चित्रलेखा को एक स्वतंत्र विचारोंवाली नारी के रूप में चित्रित किया है। इसप्रकार इस उपन्यास में प्रमुख पात्र के रूप में चित्रलेखा का उल्लेख करते हुए सारी कथा उसके प्रसंगों में उसी का ही वर्णन दिखाई देता है। इस उपन्यास में चित्रलेखा एक मौर्य कालीन राजनर्तकी के रूप में उपस्थित की गई है मगर यह पात्र ऐतिहासिक नहीं है तो वह वर्माजी ने काल्पनिक रीति से निर्माण किया है। इस प्रकार चित्रलेखा अपने पति समान बीजगुप्त को छोड़कर कुमारगिरि की कुटि में रहने के लिए जाती है, मगर अंत में स्वयं ही कुमारगिरि के हाथों भ्रष्ट और अपमानित हो जाती है।

ऐतिहासिक वर्णन देखते हैं तो उसमें राजदरबारों में नृत्य-संगीत को बड़ा महत्व दिया जाता था। राजालोग, सामंतगण सभी कलाप्रेमी दिखाई देते हैं। जैसे कि इस उपन्यास में भी एक सामंत के यहाँ पर उसकी पुत्री के वर्षगाँठ पर नृत्य और संगीत का आयोजन किया हुआ नजर आता है। आर्यश्रेष्ठ मृत्युंजय पाटलिपुत्र के समृद्ध एवं वयोवृद्ध सामंत थे, जो जन्म से क्षत्रिय होते हुए भी कर्म से ब्राह्मण थे। नगर में उनकी यथेष्ट प्रतिष्ठा एवं सम्मान था। धन और वैभव की इस एकांतवासी क्षत्रिय के पास कमी न थी। उनकी केवल एक संतान थी, वह भी सुंदरी पुत्री यशोधरा थी। यशोधरा के वर्षवगाँठ के अवसर पर चित्रलेखा को आमंत्रित किया गया। इस अवसर पर आग्रहवश चित्रलेखा नृत्य करती है। परंतु उसी समय कुमारगिरि शिष्य विशालदेव के साथ पधारे। मृत्युंजय कुमारगिरि का स्वागत करने चले गए। इसी कारण चित्रलेखा के नृत्य में रुकावट आ जाती है। इसको वह अपना अपमान मानती है। वहाँ से रूठकर जाना चाहती है। इसका कारण वह बीजगुप्त के पूछने पर बताती है कि - 'मेरी दृष्टि में कला का सर्वोच्च स्थान है। जो मनुष्य कला का अपामान करता है वह मनुष्य नहीं है पशु है। मृत्युंजय को कुमारगिरि का स्वागत करने के लिए नृत्य को बंद कर देना मेरा अपमान नहीं तो क्या है?'

यशोधरा के अनुनय पर चित्रलेखा ने फिर नृत्य आरंभ किया। इसी बीच लोगों के आग्रह पर बीजगुप्त ने सुंदर गाना गाया। यशोधरा ने भी गाया। इससे यह लोग कलाप्रेमी है इसका पता चलता है। कुमारगिरि यशोधरा और चित्रलेखा के सौंदर्य की तुलना करने लगे दोनों ही उच्चकोटि की सुंदरियाँ थीं, पर यशोधरा में शांति प्रधान है - चित्रलेखा में मादकता प्रधान हैं। चित्रलेखा जीवन की हलचल है, यशोधरा मृत्यु की शांति। यह दृश्य देखते-देखते कुमारगिरि को अनुभव हुआ, मानो वह संसार की ओर आकर्षित हो रहे हैं। नृत्य समाप्त हो जाता है।

नृत्य समाप्त हो जाने के बाद सभी उपस्थित लोग चले जाते हैं, सिर्फ बीजगुप्त, चित्रलेखा, श्वेतांक, कुमारगिरि और विशालदेव भोजन के लिए रुक जाते हैं। भोजन आरंभ होता है। बीजगुप्त ने यशोधरा से बातें करते समय बताया कि यशोधरा से परिचय हुआ यह उसका अहोभाग्य है। चित्रलेखा ने हँसते हुए कहा - 'भगवान करे यह परिचय घनिष्ठता में परिणत हो और घनिष्ठता जीवन के पवित्र बंधन में।' [27] यह सुनकर बीजगुप्त चकित हो उठा; पर यशोधरा को बहुत अच्छा लगा। यशोधरा से पूछने पर बीजगुप्त ने श्वेतांक का परिचय उससे करा दिया। उसे देखकर सहज रूप से वह श्वेतांक की ओर आकृष्ट हो गई थी। बीजगुप्त ने

मृत्युंजय से भी श्वेतांक का परिचय कराया। भोजन के बाद सब लोग चले जाने के बाद मृत्युंजय ने बीजगुप्त से पूछा कि क्या उसका विवाह हुआ है। बीजगुप्त ने कहा शास्त्रानुसार नहीं। लोगों की दृष्टि से वह अविवाहित है; पर वास्तव में वह विवाहित है। चित्रलेखा उसकी पत्नी है। उसने आगे कहा कि चित्रलेखा से उसका संबंध पति-पत्नी जैसा है। प्रेम में उसका विश्वास है और उसके प्रेम की अधिकारिणी चित्रलेखा के अतिरिक्त कोई दूसरी स्त्री नहीं हो सकती। मृत्युंजय बीजगुप्त के सामने यशोधरा के लिए विवाह प्रस्ताव रखता है। मगर बीजगुप्त के अनुसार स्त्री-पुरुष के चिर स्थायी संबंध को ही विवाह कहते हैं। इस बात पर मृत्युंजय उसे समझाते हुए कहते हैं कि - '..... विवाह पुत्रोत्पत्ति के लिए होता है और इसलिए आवश्यक है। चित्रलेखा की संतान बीजगुप्त की संतान न होगी और न वह संतान बीजगुप्त की उत्तराधिकारी ही हो सकती है। कभी इसपर भी विचार किया है?' [28]

बीजगुप्त की भलाई के लिए चित्रलेखा ने बड़े से बड़ा त्याग करने का वचन दिया। बीजगुप्त को ये बातें अच्छी नहीं लगतीं और वे उठकर बाहर चले जाते हैं। चित्रलेखा भी उठ खड़ी होती है और मृत्युंजय से कहती है - 'आर्यश्रेष्ठ ! आप बीजगुप्त के कथन पर बुरा न मानिएगा। आवेश में आकर मनुष्य भले और बुरे का ज्ञान खो बैठता है। उस समय यदि कोई दूसरा व्यक्ति उसपर अपनी धारणा बना ले, तो अनुचित है। मैं आपको इतना विश्वास दिलाती हूँ कि बीजगुप्त का और आपकी कन्या का संबंध बहुत श्रेष्ठ होगा, और इस संबंध का होना आवश्यक भी है।' [29]

इस जन्मोत्सव में संभ्रांत नागरियों के साथ-साथ नर्तकी चित्रलेखा और योगी कुमारगिरि भी सम्मिलित होते हैं, जिससे इस तथ्य का स्पष्टीकरण होता है कि उत्सवों में योगियों का भाग लेना वर्जित न था। सामंत बीजगुप्त द्वारा मृदंग और वीणा-वादन करते हुए गाना इससे स्पष्ट होता है कि सामंत गण कला प्रेमी होने के साथ-साथ कला निपुण भी हुआ करते थे जो उचित ही है। [30]

चित्रलेखा बीजगुप्त को सुखी बनाना अपना कर्तव्य मानकर त्याग को प्रस्तुत होती है। उसे लगता है कि उसके छोड़ जाने के बाद वह उसे भूल जाएगा और यशोधरा से विवाह करेगा। चित्रलेखा अपने प्रेम विषयक विचारों का चिंतन करने लगी। यहाँ चित्रलेखा का प्रणय भरा वर्णन और प्रेम में परिवर्तन दिखाई देता है। वह अनेक व्यक्तियों से प्रेम करती है। कृष्णादित्य, बीजगुप्त और अब सुंदर तेजोमय युवक योगी कुमारगिरि की ओर आकृष्ट हुई और उसी से प्रेम करने लगी। चित्रलेखा अपना सर्वस्व त्यागकर कुमारगिरि के पास दीक्षा लेने के लिए जाती है। कुमारगिरि से वह कहती है योगी, क्या मुझे दीक्षा देने के लिए तैयार हो? मगर योगी इसे असफल बताते हुए कहते हैं - योगी इसे असंभव बताते हैं। बीजगुप्त को सुखी बनाना अपना कर्तव्य मानकर चित्रलेखा सारे आभूषण उतार कर एक केशरिया रंग की रेशमी साड़ी पहनकर अपने भवन का समस्त भार विश्वस्त दासी सुनयना के हाथों सौंपकर यहाँ कुमारगिरि की कुटि में आई है। इस प्रकार की इच्छा प्रकट करने पर उसपर कुमारगिरि उससे कहते हैं - 'तुम्हें दीक्षा देने के अर्थ होते हैं गिरना, नीचे गिरना। कहाँ? नीचे ही नीचे जहाँ अंत ही नहीं है। मैं तुम्हें जानता हूँ और मैं अपने को भी जानता हूँ। तुम्हें ऊपर उठाना कठिन है, स्वयं नीचे गिरना सरल है' [31] कुमारगिरि झूठे विश्वास के कारण दीक्षा देने के लिए तैयार होते हैं और विशालदेव को बताते हैं कि अब तुम पाप देखो और उस पाप पर मैं किस प्रकार विजय पाता हूँ यह भी देखो।

बीजगुप्त चित्रलेखा के न होने पर यशोधरा की ओर आकर्षित होते हैं। उसे लगने लगा कि हमने अकारण ही मृत्युंजय का अपमान किया था। उसके लिए मृत्युंजय से पत्र भेजकर क्षमा याचना करता है। बीजगुप्त एक ही स्त्री से प्रेम करता था वह थी चित्रलेखा। इसलिए कुमारगिरि की कुटि में चित्रलेखा को समझाने के लिए

बीजगुप्त जाता है। उस समय बीजगुप्त के चरणों पर चित्रलेखा गिर जाती है और निवेदन करती है - 'बीजगुप्त। तुम पूज्य हो; तुम मनुष्य नहीं हो, देवता हो। मैं तुम्हें जानती हूँ, पर साथ ही मैं यह भी जानती हूँ कि मैंने तुमसे प्रेम करके तुम्हारे जीवन को निरर्थक बना दिया है। बीजगुप्त, तुम्हारा विवाह होना ही चाहिए तुम मुझसे प्रेम करते हो, मुझे सुखी बनाना तुम्हारा कर्तव्य है। मुझे तब तक सुख न होगा, जब तक मैं तुम्हें विवाहित न देखूँगी और तुम्हारी संतान से माता न कहलाऊँगी। तुम विवाह कर लो; और यह याद रखना बीजगुप्त, कि मैं तुमसे सदा प्रेम करती रहूँगी। क्या प्रेम का प्रधान अंग भोग-विलास ही है, क्या बिना भोग-विलास के प्रेम असंभव है? मैं तुमसे इस समय केवल शारीरिक संबंध तोड़ रही हूँ; इसकी अपेक्षा हमारा आत्मिक संबंध और दृढ़ हो जाएगा।' [32] इससे स्पष्ट होता है कि चित्रलेखा चंचल और स्वतंत्र विचारोंवाली है।

इस प्रकार उपन्यास में बीच में प्रणययुक्त, चित्रलेखा, बीजगुप्त, कुमारगिरि का वर्णन है। इसी दरम्यान श्वेतांक और यशोधरा का भी कुछ दृश्यों में इसी प्रकार का थोड़ा-बहुत वर्णन आ गया है। बीजगुप्त को चित्रलेखा का वियोग असह्य होता है। इसीलिए उसने मनःशांति के लिए कुछ समय के लिए पाटलिपुत्र से बाहर जाने का निर्णय लिया। श्वेतांक शुरू में जाने के लिए तैयार नहीं होता। उसे यशोधरा के सामने अपना प्रेम प्रकट करना है। मौका पाकर श्वेतांक यशोधरा के सामने अपना प्रेम प्रकट करता है। यशोधरा के आग्रह पर मृत्युंजय और यशोधरा भी काशी जाने के लिए तैयार हो गए।

उपन्यास के बीच में प्रणय से भरे वर्णन के बाद काशी की यात्रा का वर्णन आया है इसका संबंध प्राचीन लगता है। काशी का संबंध प्राचीन और इतिहास से है। बीजगुप्त, श्वेतांक, मृत्युंजय, यशोधरा, दास और दासियों समवेत काशी की ओर रवाना हुए। बीजगुप्त विचारों में इतना खो गया था कि आधी रात बीत गई; पर विश्राम के लिए कहीं रुकने की बात उसके दिमाग में नहीं आई। आखिर मृत्युंजय के एक परिचित सामंत की वाटिका में वे सब विश्राम के लिए रुके।

चित्रलेखा और यशोधरा के विचारों के कारण बीजगुप्त को रात में नींद नहीं आई। प्रातः समय जल्द ही भ्रमण के लिए बीजगुप्त चल पड़ा तो यशोधरा भी वहाँ दिखाई दी। यशोधरा प्रकृति के सौंदर्य की तारीफ कर रही थी; पर चित्रलेखा के वियोग दुख से दुखी तथा यशोधरा से नए संबंध जोड़े या न जोड़े इस कश्मकश में पड़ा बीजगुप्त नाना तर्क देकर सिद्ध कर रहा था कि प्रकृति कितनी कुरूप है। उसने बताया कि दुर्वादल में कीड़े मकौड़े होते हैं। प्रकृति में कहीं कुहरा छाया रहता है, तो कहीं कड़ी-धूप पड़ती है। फूलों में काँटे होते हैं। पक्षियों का संगीत भावहीन होता है। इतना ही नहीं, तो जंगलों में शेर जैसे हिंस्र प्राणी होते हैं, नदियों में मगर होते हैं, घास में साँप छिपे रहते हैं, जो मनुष्य को बेवजह काँटते हैं। बीजगुप्त के अजीब तर्कों को सुनकर यशोधरा आश्चर्य चकित हुई। उसने अपने पिता के सामने बीजगुप्त के अजीब तर्कों की चर्चा करते हुए तारीफ की। यशोधरा को बीजगुप्त की ओर आकर्षित देखकर श्वेतांक का मुख पीला पड़ गया। बीजगुप्त के बारे में उसका सेवक होने के कारण विरोध प्रकट न करने की बात जब श्वेतांक ने कहीं तो उसकी स्वामिभक्ति कर्तव्यभावना और पराधीनता आदि के विचार से यशोधरा की आँखों में श्वेतांक के प्रति सहानुभूति मिश्रित प्रेमभावना झलकने लगी।

योगी कुमारगिरि नर्तकी चित्रलेखा से जितना ही दूर हटने का प्रयास करते थे, उससे उतने ही अधिक निकट आते जा रहे थे। चित्रलेखा के सहवास के कारण कुमारगिरि में चंचलता आ जाती है। कुमारगिरि प्रतिहिंसा-ज्वाला में जल रहे थे। उसकी सारी इंद्रियाँ वासना की ओर उन्मुख हो रही थीं। यही कारण है कि वह चित्रलेखा से बीजगुप्त के बारे में झूठ बोलता है कि बीजगुप्त और यशोधरा का विवाह हो गया है, और वह सब

काशी गए हुए हैं। यह सुनते ही चित्रलेखा का आत्मविश्वास काँप उठा। उसे बहुत दुख लगता है, उसे लगता है अब सब समाप्त हो गया। मेरा धन लुट गया, अब मैं वापस कभी नहीं जाऊँगी। यह खबर सुनते ही चित्रलेखा टूट-सी गई। वह कुमारगिरि कि हाँ में हाँ मिलाते हुए उसके सामने आत्मसमर्पण करती है। सुबह विशालदेव से उसे सत्य बात जान पड़ती है कि उन दोनों का विवाह नहीं हुआ है। तब वह कुमारगिरि को प्रताड़ित एवं लांछित करते हुए उसकी कुटिया से प्रस्थान करती है। यह भी बात उसे समझती है कि यशोधरा का विवाह श्वेतांक से हो रहा है। सत्य बात समझने पर चित्रलेखा के मन में कुमारगिरि के प्रति घृणा निर्माण होती है - 'तुमने मुझे धोखा दिया। वासना के कीड़े। तुम मुझसे झूठ बोले। तुम्हारी तपस्या विफल हो जाएगी और तुम्हें युगों-युगों नरक में जलना पड़ेगा। मैं जाती हूँ - अब तुम मुझे रोक न सकोगे।' वह चली जाती है।

बीजगुप्त अब यशोधरा से विवाह करने का निश्चय करता है। लेकिन उसे श्वेतांक दुखी नजर आता है। इसका कारण पूछने पर श्वेतांक बताता है कि वह यशोधरा से प्रेम करता है और उसके साथ विवाह करना चाहता है। और यही प्रस्ताव आप ही को मृत्युंजय के सामने रखना होगा। यह सुनकर बीजगुप्त उद्‌विग्न हो गए, उनका स्वर तीव्र हो गया - 'तुम मुझसे क्या करने को कह रहे हो श्वेतांक। क्या इतनी वेदना, इतना दुःख और इतनी हलचल मेरे लिए काफी नहीं है? क्या चाहते हो कि मैं अपना जीवन नष्ट कर दूँ? नहीं श्वेतांक। यह असंभव है, मैं यशोधरा से विवाह करूँगा - इतना समझ लो।' [33] इतना सुनकर श्वेतांक की आँखों से आँसू बहने लगे और उसने बीजगुप्त से क्षमा याचना की। श्वेतांक चले जाने के बाद बीजगुप्त सोचने लगे उसे लगा कि श्वेतांक की विवाह की इच्छा अनुचित नहीं है। उसे लगता है मैं भी एक स्त्री से प्रेम करते-करते दूसरी स्त्री से प्रेम करने लगा यह उचित नहीं है, क्या चित्रलेखा के प्रति मेरा प्रेम मर गया है। वह निश्चय करता है कि उसका चाहे जो हो; पर श्वेतांक का जीवन उसे दुःखमय नहीं बनाना चाहिए।

मृत्युंजय के द्‌वार पर बीजगुप्त का रथ पहुँचा। विवाह का प्रस्ताव लेकर आने की बात बीजगुप्त से सुनकर उसे प्रसन्नता हुई। पर दूसरे ही क्षण बीजगुप्त ने कहा - 'आर्य मृत्युंजय, मैं अपने संबंध में कुछ नहीं कहना चाहता। मैं अपने संबंध में पहले ही कह चुका हूँ। मैं यह प्रस्ताव लेकर उपस्थित हुआ हूँ कि आप अपनी कन्या का विवाह श्वेतांक से कर दे। श्वेतांक कुलीन है, सुंदर है, सभ्य तथा शिक्षित है - वह वास्तव में आपकी कन्या के लिए योग्य वर होगा - शायद मुझसे भी योग्य।' [34] परंतु मृत्युंजय ने कहा कि श्वेतांक योग्य है मगर वह निर्धन है। बीजगुप्त ने कहा आप तो धनवान है और यशोधरा के सिवा आपकी कोई संतान नहीं है। मृत्युंजय इसपर कहते हैं कि मेरी संपत्ति पर मेरी कन्या का कोई अधिकार नहीं बल्कि उसपर मेरे दत्तक पुत्र का ही अधिकार रहेगा। इस वर्णन से हमें प्राचीनकाल की रूढ़ि परंपरा का पता चलता है इसीलिए यह वर्णन इतिहास कालीन लगता है। मृत्युंजय के इस निर्णय पर बीजगुप्त अपना निर्णय बताते हुए कहते हैं कि, 'आर्य मृत्युंजय। मैं श्वेतांक को अपना दत्तक पुत्र बना रहा हूँ। इस प्रकार वह मेरी संपत्ति का अधिकारी होगा। ऐसी स्थिति में तो आपको कोई आपत्ति न होनी चाहिए।' [35] उसके आगे जाकर मृत्युंजय कहते हैं बीजगुप्त आप अभी जवान हैं आपने शादी कर ली तो आपका पुत्र ही इस संपत्ति का उत्तराधिकारी बनेगा दत्तक पुत्र नहीं। बीजगुप्त अपने मन की बात बता देता है कि मैं चाहता हूँ कि श्वेतांक और यशोधरा का विवाह होकर वह सुखी बने। इसके लिए मैं कोई भी त्याग करने के लिए तैयार हूँ। इसके लिए मैं अपनी सारी संपत्ति और सामंत पदवी दान के रूप में श्वेतांक को देने का निश्चय करता हूँ। बीजगुप्त का यह अंतिम निर्णय सुनने के बाद मृत्युंजय इस प्रस्ताव को स्वीकृति देते हैं। बीजगुप्त दान-पत्र तथा पदवी के लिए राजाज्ञा का प्रबंध करने के लिए जाना चाहते हैं तभी मृत्युंजय उससे कहते हैं कि - 'आर्य बीजगुप्त। मैंने संसार को देखा है। मैं कहता हूँ, आप मनुष्य नहीं है, देवता है।' [36] बीजगुप्त अपने भवन पर आया। श्वेतांक से कहा कि - 'मैं जो कुछ कर रहा हूँ वह ठीक है। सुनो।

मैंने तुम्हारे विवाह का प्रस्ताव आर्य मृत्युंजय से किया था - उन्होंने कुछ आपत्ति की। उस आपत्ति को दूर करने के लिए मैंने अपनी संपत्ति तथा पदवी का दान उनके सामने तुम्हें कर दिया। अब उनको यशोधरा का तुम्हारे साथ विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं है।' [37]

कुमारगिरि के यहाँ से चित्रलेखा अपने भवन आई। कुमारगिरि के यहाँ पागलपन में आत्मसमर्पण कर अब वह पछता रही थी, रो रही थी। उसे स्वयं से ही घृणा हो गई थी। बीजगुप्त के प्रति वह अपराधिनी थी। इसलिए उससे मिलने के लिए वह घबरा रही थी।

एक मास बाद श्वेतांक उसके यहाँ अपने विवाह का निमंत्रण देने गया। चित्रलेखा को उसने बीजगुप्त के सर्वस्व त्याग की और उसी कारण यशोधरा के साथ विवाह तय होने की बात कही। उसने यह भी कहा कि उसके विवाहोपरांत सोमवार की रात्रि में ही वो पाटलिपुत्र छोड़कर चले जाएँगे। यह सुनकर चित्रलेखा सन्न रह गई।

श्वेतांक का विवाह हो गया। प्रीति भोज में सम्राट के साथ अन्य अतिथि आए। उस दिन बीजगुप्त सबका स्वागत कर रहा था। वह सब से हँसकर बातें करता था, पर उसका हृदय जल रहा था। चित्रलेखा की अनुपस्थिति उसे बुरी लगी। भोजन के बाद सम्राट ने श्वेतांक को बधाई दी और उसको सामंत के नाम से संबोधित किया। इसके बाद उनकी दृष्टि बीजगुप्त पर पड़ी। बीजगुप्त को बुलाकर सम्राट ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। इसके बाद वे खड़े हो गए। सम्राट के साथ अन्य अतिथि भी खड़े हो गए। भवन में सन्नाटा छा गया। सम्राट ने आरंभ किया - 'बीजगुप्त। तुम एक महान आत्मा हो। तुमने असंभव को संभव कर दिखाया। तुम मनुष्य नहीं हो, तुम देवता हो। आज भारतवर्ष का सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य तुम्हारे सामने मस्तक नमाता है।' [38] इतना कहकर स्वयं सम्राट चंद्रगुप्त ने बीजगुप्त के सामने सिर झुका दिया। जितने अतिथि वहाँ पर खड़े थे, सब के सिर एक साथ ही झुक गए - स्त्रियों के बीच से हिचकियों के साथ एक दबा रुदन फूट पड़ा। बीजगुप्त भिखारी बनकर देश-पर्यटन के लिए द्वार की ओर बढ़े। सारे अतिथि दोनों ओर एक पंक्ति में खड़े थे। वृद्ध से लेकर बालक तक हाथ जोड़कर खड़े हो गए थे। बीजगुप्त वैभव तथा शक्ति के उस जमघट में से शांति और त्याग की गुरुता के साथ निकल गया। इस प्रसंग का सारा वर्णन देखते हैं तो वह प्राचीनता और इतिहास के निकट का लगता है।

जब बीजगुप्त देश-पर्यटन के लिए अर्ध-रात्रि में निकल पड़ता है तो उसे किसी ने पुकारा - 'मेरे देवता।' चित्रलेखा क्षमायाचना करती चरणों पर गिर पड़ी। बीजगुप्त उसे अपने जीवन का अभिशाप मानता है। चित्रलेखा कहती है - 'नाथ। मैंने तुम्हारा जीवन नष्ट कर दिया, मैंने तुम्हें मिटा दिया। तुम मुझे शाप दो, दंड दो, मुझे ताड़ित करो - पर मुझसे घृणा न करो।' [39] अंत में देवता स्वरूप बीजगुप्त उसे क्षमा कर देता है वह उसे एक भिखारिणी के रूप में ही स्वीकार करता है।

पूर्ण एक वर्ष के बाद श्वेतांक, विशालदेव और महाप्रभु रत्नांबर मिलते हैं। अपने-अपने अनुभव बताते हैं। इस प्रकार गुरुकुल पद्धति यह प्राचीनकाल की पद्धति है उसका यहाँ वर्णन दिखाई देता है।

उपन्यास में ऐतिहासिक वातावरण है शुरू और अंत में ऐतिहासिक पात्रों के प्रसंगों का वर्णन दिखाई देता है। ऐतिहासिक पात्र दो ही हैं। उपन्यास में स्थान का उल्लेख है ऐतिहासिक नगर पाटलिपुत्र का, इसी नगर में ही कथा का सूत्रपात हुआ है। इतिहास में राजप्रासादों, भवनों राजमार्गों तथा उद्यानों की बड़ी प्रशंसा की गई है, उसकी रमणीयता का वर्णन दिखाई देता है। मगर उपन्यास में इसका वर्णन दो-तीन प्रसंगों में दिखाई देता है। जैसे राजमार्ग या राजप्रासादों का वर्णन आया है, चित्रलेखा के रथ को देखकर सामंत के रथ रुक जाते थे, लोग उसे अभिवादन करते, उसपर फूल बरसाते हैं। इस प्रकार का वर्णन इतिहास से संबंधित है।

इस प्रकार शुरू में गुरुकुल पद्धति, चंद्रगुप्त मौर्य के राजदरबार का वर्णन उसमें कुमारगिरि के चमत्कार, सामंत के यहाँ भोजों का वर्णन, राजमार्ग, भवनों, राजप्रासादों का वर्णन आदि प्रसंगों का वर्णन इतिहास और प्राचीनता से संबंधित है।

निष्कर्ष

भगवतीचरण वर्माजी का 'चित्रलेखा' उपन्यास समस्याप्रधान है। इसमें दार्शनिक तत्व दिखाई देता है। 'चित्रलेखा' का कथानक अतीत के युग-विशेष से बँधा होने पर भी ऐतिहासिक उपन्यास के लिए यथेष्ट वातावरण का सर्जन नहीं करता। उसमें युगोचित सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक मूल्यों की भूमि स्थापित नहीं हुई है। ऐतिहासिक उपन्यासों में बहुधा जीवन संबंधी समस्याएँ विशिष्ट युग की होती हैं।

ऐतिहासिक तत्व को लेखक ने प्रधान नहीं माना है। उन्होंने इस उपन्यास में विचारणीय साहित्यिक नियमों की ओर ध्यान नहीं दिया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि 'चित्रलेखा' उपन्यास ऐतिहासिक नहीं है, इतिहास का आभासमात्र देता है। यहाँ दृष्टिकोण की दृष्टि से ऐतिहासिकता के अलावा दार्शनिकता ज्यादा है। इस उपन्यास में सिर्फ दो ही पात्र ऐतिहासिक हैं, सम्राट चंद्रगुप्त और महामंत्री चाणक्य परंतु केवल दो ही बार सारे उपन्यास में उनके दर्शन होते हैं। और दोनों बार ही हम उनसे तनिक भी प्रभावित नहीं होते। इसी प्रकार महामंत्री चाणक्य की प्रबंध-कुशलता और जिसका परिचय हमें संस्कृत के 'मुद्राराक्षस' नाटक में मिलता है, कोई भी चित्र देखने को नहीं मिलता। चित्रलेखा के लेखक ने उन्हें केवल एक शुष्क वेदांती के रूप में प्रस्तुत किया है। अतः वह ऐतिहासिक तथ्यों की ओर से उदासीन रहा है। एक बात विशेषरूप से खटकने की है - वह है पाटलिपुत्र के संबंध में। पाटलिपुत्र नगर में ही कथा का सूत्रपात हुआ है। सामंत बीजगुप्त, चित्रलेखा और मृत्युंजय यहाँ के प्रभावशाली व्यक्ति थे। इतिहास में पाटलिपुत्र के प्रबंध की बड़ी प्रशंसा की गई है वहाँ के राजप्रासादों, भवनों, राजमार्गों तथा उद्यानों की रमणीयता का साधारण वर्णन आवश्यक था। यदि रोचकता को बनाए रखते हुए इतिहास का समावेश अच्छी तरह से किया जाता तो चित्रलेखा का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता।

सम्राट चंद्रगुप्त के राजदरबार का वर्णन आया है उसमें योगीयों के चमत्कार का वर्णन, उसी प्रकार विद्वानों में तार्किक वाद विवाद का वर्णन, नृत्य-संगीत आदि का वर्णन थोड़े-से प्रसंगों में आया है। मगर इन सभी प्रसंगों में ऐतिहासिक जो दो पात्र हैं उनको कोई महत्व नहीं दिया है। उसी प्रकार प्राचीन कालीन गुरुकुल पद्धति का भी बोध होता है। सामंत लोगों में भोजों का वर्णन, उसीप्रकार सामंत लोग कलाप्रेमी होते हैं इसका भी पता चला है। पाटलिपुत्र नगर का वर्णन, राजमार्ग, राजप्रासादों का वर्णन सिर्फ एक ही स्थान पर आया है। इससे उसका विकास नहीं दिखाई देता।

इससे यह स्पष्ट होता है कि चंद्रगुप्त-चाणक्य कालीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में लिखा हुआ वर्माजी का उपन्यास 'चित्रलेखा' (1934 ई.) एक अत्यंत सशक्त रचना होते हुए भी मूलतः ऐतिहासिक उपन्यास न होकर 'समस्या प्रधान' उपन्यास है। जिसमें एक कल्पित कहानी के माध्यम से पाप-पुण्य की समस्या को उठाया गया है। यह ठीक है कि तत्कालीन वातावरण के चित्रण में वर्माजी सफल रहे हैं, किंतु अतीत-चित्रण की जो प्रवृत्ति ऐतिहासिक उपन्यासों में पाई जाती है, इसका इसमें अभाव है। इन सभी बातों को देखते हुए कहना होगा कि चित्रलेखा शत-प्रतिशत ऐतिहासिक उपन्यास नहीं है; परंतु कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास अवश्य है। भगवतीचरण वर्माजी ने 'चित्रलेखा' उपन्यास की निर्मिति ऐतिहासिक वातावरण की पृष्ठभूमि में की है।

संदर्भ		पृष्ठ
1.	हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास प्रयोग - डॉ. गोविंदजी	45
2.	हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास प्रयोग - डॉ. गोविंदजी	74
3.	चित्रलेखा : एक अध्ययन	39
4.	हिंदी के श्रेष्ठ उपन्यासकार	34
5.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	14
6.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	5
7.	चित्रलेखा-संपादक-श्रीमती उमा सिंघल	81
8.	चित्रलेखा-संपादक-श्रीमती उमा सिंघल	82
9.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	10
10.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	11
11.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	12
12.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	12
13.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	14
14.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	15
15.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	18
16.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	28
17.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	32
18.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	40
19.	चित्रलेखा-संपादक-श्रीमती उमा सिंघल	83
20.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	41
21.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	41
22.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	41
23.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	41
24.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	52
25.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	57
26.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	73
27.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	74
28.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	77
29.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	80
30.	चित्रलेखा-संपादक-श्रीमती उमा सिंघल	85
31.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	85

		पृष्ठ
32.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	105
33.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	163
34.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	166
35.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	167
36.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	167
37.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	168
38.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	172
39.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	173